विषपान

[पौराणिक काव्य]

सोहनलाल द्विवेदी

इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग
१९४३

[मूल्य १)

जरत सकल सुरवृन्द,
विषम गरल जेहि पान किय।
तेहि न भजसि मति मंद,
को कृपाल शंकर सरिस।

—तुलसीदास

प रा ज य

व्यथित त्रसित देवता आज
मन म्लान कांतिहत मुखमंडल,
कोई नहीं उपाय, दानवों पर
जय पायें बनें सबल।

देवलोक में घिरी पराजय
की छाया, घनघोर घटा,
अंधकार था गहन, न कोई रश्मि
सके जो व्यथा घटा।

आज काल की कृपा सुरों
पर था दैत्यों का मान बढ़ा,
कौन जीत सकता था उनको ?
था इस पर अभिमान बढा !

आज असुर के आगे सुर
आने में भी सकुचाते थे,
क्योंकि स्वय को दीन-हीन,
निर्बल दुर्बल ही पाते थे।

विधि का विषम विधान देखकर
प्रकृति उदास मलीन हुई !
देवलोक की नहीं, सभी जग की
शोभा थी क्षीण हुई !

नन्दन वन में आज नही वह
पहले का उल्लास रहा,
गये सुरा के माणिक प्याले,
अब न मदिर मधुमास रहा !

आज कल्पतरु बना विफल
उसने भी ली समेट छाया,
जब होता विधि वाम, झुलसती,
चन्दन के जल में काया !

आज अप्सरा किन्नरियों की
सुन पड़ती है तान नहीं,
अंग-भंगिमा नृत्य हास,
वह पहले की मुसकान नहीं।

देख रहे सुर एक दूसरे का मुख,
कहते पर न कथा,
अंतस्तल की पखुरियों को
बिखराती थी मौन व्यथा।

आ का श वा णी

जीवन की सूखी शाली पर
अभिनव रस की धार बनी,
मुरझाये मन पर मधुरस की
शीतल मंद फुहार बनी,

निर्बल का बल, निराधार का
पावनतम आधार बनी,
किसी डगमगाती तरणी की
नाविक की पतवार बनी,

इसी समय गूँजी नभ वाणी—
'हे सुर ! अधिक निराश न हो.
ऐसा क्या दुर्लभ जीवन में,
जो पूरी अभिलाष न हो ?'

'उठो, चलो तुम मिलो शत्रु से
संधि करो सलाप करो,
जब तक सिद्धि न मिले, धैर्य से
बद्ध उद्योग कलाप करो !'

'उठो चलो मथकर समुद्र को
तुम अमृत का पान करो,
अमर बनो, फिर करो युद्ध,
यह हीन भाव अवसान करो !'

अमृत-पान तो अमर करेंगे
असुर सभी ढो देंगे भार,
आज तुम्हारे महारोग का
यही अमोघ एक उपचार।

पल ही में प्रतिकूल प्रभंजन
पाकर प्रलय मेघ भागे,
आज देवताओं के युग युग
के थे पुण्य भाग्य जागे !

इस विराट जीवन में होता
कभी कभी ऐसा संयोग,
योग भोग से मिल जाते हैं,
घुलमिल रहते मिलन वियोग!

दैत्य देवता मिल बैठे क्या,
ज्ञान और अज्ञान मिले!
एक प्रहर में काल-ताल के
ध्वंस और निर्माण मिले!

दिवा रात्रि है चले आज
किस नवभव का करने निर्माण?
धरणी अंबर चले बनाने
कौन नवीन क्षितिज छविमान?

पाप पुण्य हिल मिल बैठे है
यह किस तपसी का वरदान?
निश्चय ही इस महामिलन का
होगा कोई लक्ष्य महान!

कहा इन्द्र ने, 'दैत्यराज!
हम आये यहाँ आज इससे,
चलो अमृत-संधान करें
मर बनें

प्रस्ताव

आज स्वर्गगृह की सुषमा है
अद्भुत और विचित्र बनी,
एक साथ ही खिली जहाँ पर
अमा और पूर्णिमा घनी !

घुलमिल जहाँ आज बैठे हैं
दैत्य देवता हिले मिले,
जैसे सुख दुख या कि
पतन उत्थान आज हों साथ खिले !

आज देवताओं में फिर से
जीने का उत्साह जगा,
एक बार हो अमर, अमृत
पीने का प्रबल प्रवाह जगा।

जगा एक नवजीवन मन में
युग युग का परिताप भगा
जगी महत्त्वाकांक्षा जय की,
अब जीवन था सुखद लगा।

चले देवता आज दानवों
से मिल करने को प्रस्ताव,
अमृत संचय करें आज हम
तो जीवन का मिटे अभाव।

प्र स्ता व

आज स्वर्गगृह की सुषमा है
अद्भुत और विचित्र बनी,
एक साथ ही खिली जहाँ पर
अमा और पूर्णिमा घनी !

घुलमिल जहाँ आज बैठे हैं
दैत्य देवता हिले मिले,
जैसे सुख दुख या कि
पतन उत्थान आज हों साथ खिले !

नाग

इस विराट जीवन में होता
कभी कभी ऐसा संयोग,
योग भोग से मिल जाते हैं,
घुलमिल रहते मिलन वियोग !

दैत्य देवता मिल बैठे क्या,
ज्ञान और अज्ञान मिले !
एक प्रहर में काल-ताल के
ध्वंस और निर्माण मिले !

दिवा रात्रि हैं चले आज
किस नवभव का करने निर्माण ?
धरणी अंबर चले बनाने
कौन नवीन क्षितिज छविमान ?

पाप पुण्य हिल मिल बैठे हैं
यह किस तपसी का वरदान ?
निश्चय ही इस महामिलन का
होगा कोई लक्ष्य महान !

कहा इन्द्र ने, 'दैत्यराज !
हम आये यहाँ आज इससे,
चलो अमृत-संधान करें
सब अमर बनें, न मरें जिससे !'

दैत्यराज बलि ने सोचा
यह भी अच्छा प्रस्ताव रहा,
अमर हमारे ही आश्रित हैं
अमृत मिले, हो हर्ष महा !

त्रिपुर आदि दैत्यों ने मिलकर
और विचार विमर्श किया,
फिर देवों का यह महत्त्वमय
संधि-निमंत्रण मान लिया।

बलि ने कहा इन्द्र से, 'अब से
हममें तुममें सधि रही,
जब तक अमृत न मिले,
तब तलक छानें अबर सिंधु मही।'

अमृत

अमृत अमृत की रटन लगी थी
देवों की मधु रसना में,
अमृत अमृत की थी प्रतिध्वनि
दैत्यों के अन्तर पलना में;

अमृत अमृत की थी पुकार
कैसे अमृत का पान मिले?
जीवन हो यह सफल, सफल
रसना हो, रस का दान मिले!

अमृत जिसे पीकर न कभी
कोई मर सकता है रण में,
अमृत जिसे पीकर यौवन
खिल खिल उठता है क्षण क्षण में!

अमृत कहाँ से मिले? अमृत
का है भव में आगार कहाँ?
कौन अमृत का धनी? कौन
करता अमृत व्यापार कहाँ?

अतल, वितल, पाताल, रसातल,
भूतल निखिल सृष्टि मंडल,
कहाँ अमृत का ठौर?
छिपाये बैठा कौन विश्व-सबल?

नभ में हो तो नभ मथ डालें
रवि शशि उडगण चूर्ण बने,
हो धरणी में धरा खोद लें,
अमृत पाकर पूर्ण बने!

हो समुद्र के अतल गर्भ में
छिपा अमृत का माणिक पात्र,
हो समुद्र-मथन पल भर में
भले बने क्षत विक्षत गात्र!

क्या ही जीवन-उपवन में
फूलेगी मन की फुलवारी ?
आशा अभिलाषा की कलियाँ
छिटकेंगी न्यारी न्यारी !

आकांक्षा का अंत न होगा,
नहीं काल का होगा अंत,
महाकाल के फण पर, सुख बन,
शयन करेंगे बने अनंत !

आज कली जो खिली विपिन में
मुरझायेगी कल न कभी,
आज अधर पर हास खिला
वह कल न बनेगा रुदन कभी,

दो दिन की चाँदनी न होगी
चिर चंद्रिका धौत जीवन,
मधुरस बरसेगा मरु तरु में
तृण तृण को दे संजीवन ।

प्रेमी की अनंत आशाये
नहीं बनेंगी नभ का फूल,
जीवन मधुर बनेगा, सब
पहुँचेंगे जग जलनिधि के कूल ।

जो अतीत बन जाता प्रियक्षण,
वर्तमान होगा वह पल;
चिरसुख, चिरमधु, चिरश्री होगी,
कैसा होगा वह भूतल?

चिर यौवन, चिर जीवन होगा,
चिर सौन्दर्य प्रमोद नये!
स्वर्ग बसेगा उस दिन वसुधा
पर तब होंगे दुःख न ये!

जहाँ मृत्यु की छाया रहती
वह होगा उल्लास भरा,
नित्य ध्वंसमय यह विराट भव
होगा दिव्य विकास भरा।

मौन कल्पना से इस सुख के
छाया प्राणों में उन्माद,
नवशोणित की आभा चमकी
मुखमंडल पर शक्ति प्रसाद।

क्या दानव क्या देव सभी के
आनन थे आनंद भरे,
जैसे अभी विजय करके ही,
अभी अमृत-घट ले उतरे!

जहाँ कल्पनामात्र अमृत की
देती हो इतना आनन्द,
मिले अमृत, उस सुख का वर्णन
तो फिर कौन करेगा छंद ?

व्यास, भास, कवि कालिदास को
कुछ अमृत की कणिका ही,
हाथ लगी होंगी अवश्य
जिससे कृति बनी न क्षणिका ही !

मर मर करके उस अमृत की
सभी खोज करते जैसे,
जब तक मिलता अमृत नहीं
सब पानी सा भरते जैसे।

इन्द्र, वरुण, मारुत, रवि, शशि,
ब्रह्मा सब ही यह बोल उठे !
राहु, केतु, शनि, शंबर आदिक
सबके मन थे डोल उठे !

चलो अमृत-संधान करें,
छानें त्रिभुवन, अगजग, प्रतियाम,
बिना अमृत के मिले, नहीं
मिल सकता जीवन में विश्राम।

दानव देव उठे हर्षित हो,
सभा विसर्जित अंत हुई,
हो अमृत-अभियान, सभी के
मन में थी बस स्पृहा यही।

अ भि या न

चले देवता दानव हिलमिल,
आज अमृत-अभियान चला,
त्रिभुवन का तम निविड़ चीर कर
जैसे स्वर्ण-विहान चला।

चले असुर सुर आज एक हो
था नवीन संधान चला,
बम बम हर हर महाघोष में
जीवन का जयगान चला।

चढ़े देवता दानव आगे
जन जन का उत्साह चढ़ा,
चढ़ा प्रकर्ष हर्ष प्राणों में,
उर में शक्ति प्रवाह बढ़ा।

चले देवता अस्त्र-शस्त्र ले
गूँज रहा डमरू का स्वर,
आज देवताओं के प्राणों में
उठती आनंद लहर!

चले विष्णु उत्सव में, था
पीताम्बर धरणी चूम रहा,
जैसे वह आनन्द मग्न
चल रहा, अलग था झूम रहा!

चली रुद्रकाली, कल्याणी,
पिये सोमरस, मधुप्याला,
चंडी चली, चली कपालिका,
पहने कोटि मुंडमाला!

यम तो चले साथ ही कितने
आज नये यमराज चले,
महाकाय भीषण जैसे
काले पर्वत उठ आज चले!

चले राहु, शनि, केतु सभी
अतिशय आह्लाद झलकता था,
आँखों से बाहर आ आ,
प्राणों का हर्ष छलकता था।

चले दैत्यगण, शेष न कोई,
था अद्भुत अभियान चला,
चले देवता भाँति भाँति के
ज्यों उठ देवस्थान चला।

शंबर का अंबर बढ़ता
पीतांबर से करके स्पर्धा,
बलि बंधन से आज मुक्त थे,
दल में बढ़ी प्रतिस्पर्धा!

आ पहुँचे सब महासिंधु तट,
नीलसिंधु था गरज उठा,
वज्रघोष था फटा गगन में
कोई जैसे बरज उठा।

गूँज रहा अभियान गीत था,
अंबर अवनी को छूकर,
बढे जा रहे देव दनुज थे,
आज सभी पुलकित पथ पर।

अ भि या न-गी त

चलो अमृत-प्रयाण को !
चलो अमृत विधान को !

वसंत आज आ गया,
अनन्त हर्ष आ गया:
न हर्ष की घड़ी टले,
सुगंध की सुरा ढले;

न और अब विधान हो !
चलो अमृत-प्रयाण को !

उर्मिल

अभी यहाँ खिली कली,
अभी सुरझ गई चली,
विकल अली अपार है,
जगत बना असार है;

न और यह विधान हो।
चलो अमृत-प्रयाण को!

अभी भवन यहाँ खड़े,
सुवर्ण शृंग है मढ़े,
सुगन्ध पुष्प हैं चढ़े,
अभी गिरे, अभी गड़े,

पतन न यों उठान हो,
चलो अमृत-प्रयाण को!

रहे नहीं निशा घनी,
रहे अनन्त चाँदनी,
विपन्न आज हों धनी
सदैव शक्ति हो बनी;

चलो समर महान को।
चलो अमृत-प्रयाण को!

न आज वैर द्वेष हो,
विनाश दुःख क्लेश हो,
प्रतीति प्रीति वेश हो,
सभी विरोध शेष हो,

चलो अमर विधान को।
चलो अमृत-प्रयाण को!

रचें नया नया गगन,
रचें नई नई पवन,
रचें नये नये भवन,
रचें नया नया भुवन!

चलो नये विधान को।
चलो अमृत-प्रयाण को!

महादेव बम बम हर हर!
बढ़े चलो हे अजर अमर!!

शृंगी फूँको, शंख बजाओ,
झाँझ मृदंग मुरज ले गाओ,
डमरू में नवनाद उठाओ;

प्राणों में हो नई लहर!
बढ़े चलो हे अजर अमर!

एक ध्वजा के नीचे आओ,
युग युग का विद्वेष भुलाओ,
जीवन में नवजीवन लाओ;

बढ़े चलो तुम चढ़ो शिखर!
गाओ महादेव हर हर!

रुको न पल भर, झुको न पल भर,
बढ़े चलो हे देव दनुज वर!
आज अमृत का कुंभ प्राप्त कर,

हरो मृत्यु का भीषण डर!
गाओ महादेव हर हर!

प्रलय घटा हो नभ पर काली,
मुखमंडल पर फूटे लाली,
बढ़ो विजय-पथ के वैताली!

मंद न हो बढ़ने का स्वर!
बढ़े चलो हे अजर अमर!

समुद्र-मंथन

शेषनाग था रज्जु बना, और
मथन दण्ड मंदराचल,
सभी अमृत के थे पिपासु
फिर, सभी न क्यों देते निज बल ?

अब था प्रश्न कठोर, कौन
वह शेषनाग का मुख पकड़े ?
महाकार्य था, करे कौन ? दोनों
में जो भी बने बड़े ?

तेईस

देवों ने सोचा—आओ हम ही
बढ़ आगे कार्य करें,
दैत्यों को हो कष्ट न भारी
शेष शीश को शीश धरें !

बढे देवगण आगे, प्रणतां-
जलि अर्पित करके ज्यों ही,
अभी दो चरण चल पाये थे,
रोषित हुए दैत्य त्यों ही !

बोले दैत्य, 'मूर्खता के सुत
क्या हम तुमसे छोटे हैं ?
जो पकड़ें हम पूँछ शेष की
क्या हम तुमसे खोटे है ?'

'करने लगे चतुरता पहले ही से
सुर छल छद्म भरे,
अमृत-घट पाकर क्या होगा ?
अभी निम्नतल ये उतरे !'

'यह अपमान हमारा है, क्या
दैत्य शक्ति में हैं निर्बल ?
जो न शेष का शीश वहन
कर सकें, नहीं इतने दुर्बल ?'

'हटो देवताओ ! आओ तुम
हमें शीश को गहने दो,
तुम आकर यह पूँछ सँभालो
हमें न पीछे रहने दो !'

हँसने लगे देव मन ही मन
दैत्य मूर्ख होते कितने ?
उपमा इनकी कठिन खोजना,
क्या बतलायें हम इतने ?

कहा इंद्र ने आगे बढ़कर
दैत्यराज, स्वागत ! आओ,
तुम्हीं उठाओ शीश भार को
दे दो पूँछ हमें लाओ !

दैत्य हुए मन में प्रसन्न,
जैसा इनका सम्मान बढ़ा।
इतने ही में फूल गये
उनका तो था अज्ञान बड़ा !

परिकर कसकर, खड़े देवता
दानव वासुकि रज्जु बना,
और मंदराचल मंथन का दंड
प्रचट उद्धारमना !

चला मंदराचल सागर में
जल अंबर को चूम चला,
लगी डोलने धरणी थर थर,
ज्यों भूकम्पन भूम चला!

क्षीर-सिंधु की लहरों में थी
आज प्रलय की ज्वार उठी,
अभी विश्व डूबा सागर में
यों जल की फूत्कार उठी!

महाघोर रव से देवों दैत्यों के
प्राण सिहरते थे,
अब क्या हो? क्या मरें सभी
अब सबके हृदय हहरते थे!!

डरते थे—अपने प्राणों में
आया अभी समुद्र चढ़ा,
देवों की तो चाल नहीं जो
हमें मार दे बढ़ा चढ़ा!

हहर हहर कर उठती लहरें
छाता भीषण हाहाकार,
आतीं तट की ओर, निगल
जायेंगी ज्यों समस्त संसार।

टूटे कितने कूल कगारे
कितने पर्वत बहे ढहे,
कितने ही वन प्रांतर डूबे
कितने ही थे डूब रहे!

देव असुर सब लगे सोचने
शेषनाग अब यह छूटे,
जहाँ खड़े हैं विपुल भार से
वे कगार अब ये टूटे!

खग व्याकुल उड़ रहे गगन में
मृग अचेत फिरते वन में,
उठा बवंडर था यह भीषण,
जो न उठा था जीवन में!

एक घोर रव गूँज रहा था,
केवल व्याकुल त्रिभुवन में,
बधिर दिशा के श्रवण बने थे,
थी विभीषिका कण कण में।

होने लगा प्रतीत जल प्रलय
गेने की वेला आई,
अमृत-पान के उपालंभ में
महामृत्यु खेला आई!

क्रमशः

जलप्लावन का दृश्य, उस दिवस
अंकित हुआ चित्रपट में,
त्राहि! त्राहि! का महाघोर रव,
गूँज रहा था घट-घट में।

वासुकि का भी धैर्य थका था,
स्वय बँधे थे बंधन में,
आकुल-व्याकुल प्राण हो रहे
एक हर्ष था यह मन में;

वह अमृत का पान—एक
आशा थी मन को हरा किये,
सभी श्रान्त, उद्भ्रान्त, किंतु,
कटिबद्ध खड़े थे सुरा पिये!

और मदराचल के प्राणों में
भीषण उद्वेलन था,
खड खंड हो रहे अंग थे
यों अपार उत्पीड़न था।

उठती थीं जल की धारायें
छूती थीं अम्बर के छोर,
भीग रहे थे दिग्गज के
मस्तक होकर आश्चर्य-विभोर!

था अगस्त्य का क्रोध प्रज्वलित
सूख रहा था पारावार,
जल थल नभ थे शरण खोजते
तट पर आये व्यथित अपार !

था फेनिल उच्छ्वसित, सिंधुजल
थे फेनिल उच्छ्वसित सभी,
था आकुल उच्छ्वसित शेष, थे
देव असुर तो मूर्च्छित भी !

क्या अगस्त्य की भ्रकुटि धनुष
की प्रत्यंचा थी आज चढ़ी ?
सूख रहा था आज महार्णव,
लहरों में थी व्यथा बड़ी !

आकांक्षा सी लहरें उठतीं
गिरतीं आंसू बन नीचे,
था किसका अभिशाप भयंकर,
खड़ी शक्ति आंखें मींचे !

मथी जा रही आज कल्पना,
भावों का तूफान उठा,
मींड़ मूर्च्छना गमक उठ रही,
आज प्रलय का गान उठा !

युग युग के विधि के विधान की
आई कठिन परीक्षा थी,
ध्वंस हो रहा एक ओर,
विधि की यह कठिन समीक्षा थी !

कौन लिखेगा उस समुद्र-मंथन का
वह पूरा इतिहास ?
जहाँ कल्पना स्वयं सोचने
लगती क्या मैं करूँ प्रयास ?

विष

मथित हुआ महोदधि, सब की
आँखों में उत्सुकता थी,
रत्न निकलता कौन कहाँ कब
सबको ही उत्कंठा थी;

अमृत हो गया स्वप्न, अरे यह
क्या था कालकूट निकला ?
गरल, महाविष, नील श्याम,
भूतल से आज फूट निकला !

क्या समुद्र प्रतिशोध आज
लेगा इन देवों दानव से ?
जीवन ही मथ डाला जिनने
जिसका निज बल-वैभव से !

गरज उठा नीलोदधि, बहरी
हुई दिशायें, रोर हुआ,
कौन टिकेगा अब मंथन में
था हा हा रव घोर उठा !

ताल ठोंककर आये थे जो
विरुदावलि का गान लिये,
धीर वीर हम है दिग्विजयी,
भूधर का अभिमान लिये;

हम हैं अग्नि तपा डालेंगे,
भस्म करेंगे हम अंबर,
हम हैं वायु प्रभंजन, झोंके
में ढा देंगे गिरि दुर्धर,

हम हैं इन्द्र कँपा देंगे हम
त्रिभुवन का भी सिंहासन ?
हम है बलि हम दैत्यराज
मथ डालेंगे चौदहों भुवन,

ध्रुव धीरों की अहंमन्यता,
एक पलक में चूर्ण हुई!
अट्टहास कर उठी नियति
उसकी थी इच्छा पूर्ण हुई!

लगे भागने देव दनुज सब,
सबका ही पौरुष भागा,
देखें टिकता आज कौन?
किसका था इतना बल जागा?

निकला कालकूट जिस क्षण से,
हुईं वायु की कणिकायें
लहरें विष की, चिंतित सब थे
चिंतित किधर कहो जायें?

जलचर थलचर नभचर जितने
जीव चराचर के प्राणी,
मूर्च्छित से हो गये, नहीं
खुलती थी जिह्वा से वाणी!

नाच उठीं लहरें जलनिधि की
देख सभी का बल विक्रम,
क्या अमृत का पान करेंगे
जो न पियेंगे गरल प्रथम?

कौन गरल का पान करे अब
एक समस्या खड़ी हुई,
अमृत तो हो गया स्वप्न
प्रत्यक्ष मरण की घड़ी हुई !

भगने लगे सभी निजगृह को
भगने लगे सभीत चरण,
मुकुट कहीं, केयूर कहीं था,
कहीं किरीट रत्न कंकण !

कोई यों भयत्रस्त, बना जड़,
बढ़ न सका, पग बना शिला,
किसने बाँध दिया था गति को
सब बदी थे, खड़ा क़िला !

रवि, शशि, उड़गण, लगे खिसकने
अंबर व्यथित अधीर हुआ,
अंधकार घिर चला धरा पर,
आज भाग्य बेपीर हुआ !

रुद्राणी, चंडिका, कपिर्दिन,
खड़ीं भीत हो कोने में,
मुंडमालिनी की रसना,
जड़ हुई, सिमटकर दोने में !

यम न कहीं, यमराज नहीं थे,
जाने कहाँ छिपे भयभीत ?
आज पराभव की वेला में
भगे, चले जो करने जीत !

देवों के मुख पीतवर्ण थे,
वह अरुणाभा रही नहीं,
वह उत्सव उत्साह धार थी
जाने अब उड़ गई कहीं।

दैत्य पलायन की मुद्रा में
खड़े खिसकने को पल में,
पर, न त्राण की शरण कहीं थी,
सभी पड़े थे दलदल में,

त्राण करो हा त्राण करो की
कातर करुण पुकार उठी,
कण कण तृण तृण विकल बना था,
त्राण त्राण झनकार उठी।

विषपान

आज हिमाचल के शृंगों में
चिन्ता की छाया आई,
लता, गुल्म, तरु में, पल्लव में
एक शून्यता थी छाई।

मानसरोवर के कंचन कमलों
का स्वर्णिम हास गया,
किसी एक दुख की छाया से
मधु का मधुर विकास गया।

आज हिमाचल के आँगन में
देव दैत्यगण का मेला,
नतमस्तक, सब विनत गर्व,
श्रीखर्व, पराजय की वेला !

आज देव दैत्यों की
आँखों में अनुनय मनुहार भरी,
एक करुण वेदना जगाने-
वाली थी झनकार भरी।

'जय जय महादेव !' की जय से
शंकर की समाधि जागी,
मंगलमय के नेत्र खुले थे,
पल में विभीषिका भागी।

समझ गये सब त्रिभुवन नायक,
आश्वासन की दृष्टि लिये,
देखा हर ने व्यथित विश्व को
नवजीवन की सृष्टि लिये।

करुणाकर बोले—न व्यथित हो,
हो अधीर मत, धीर धरो,
दूर करूंगा व्यथा तुम्हारी
तुम नारायण स्मरण करो !

आज देवता दानव के मुख पर
फिर था आनन्द भरा,
जीवन मिला, निराशा में,
आशा का सुंदर छंद भरा।

प्रलयंकर शंकर दयार्द्र ने
देखा हाहाकार मचा,
विश्व झुलस सा रहा
भस्म होने को है संहार मचा।

प्रजा देख यों व्यथित
प्रजापति शंकर का उर मथित हुआ,
एक एक दुख, शतशत दुख शर
बना, हृदय था ग्रथित हुआ।

कहा शंभु ने 'सती, आज
मेरे जाने की बेला है,
आज विश्व जल रहा गरल में,
ठीक न अब अवहेला है!

यदि न गया मैं अभी अभी ही
तो न रहेगा यह संसार,
कालकूट के काल गाल में
होगा भव का उपसंहार!

पूछा शिव ने 'कहो सती,
कहती हो क्या? विष पी लूँ मैं?
आज विश्व के संरक्षण में
एक बार, मर जी लूँ मैं!

जो यों शरणागत में आयें
उनको विमुख करूँ कैसे?
घोर पाप! पातक होगा तब,
अघ से धाम भरूँ कैसे?

समझ रही थीं सब रहस्य
माँ शिवा शक्ति वे कल्याणी,
बोलीं, 'जाओ हे विश्वंभर!
आशुतोष, औढर दानी!

'पियो गरल विष, कालकूट तुम
कुछ भी हो परिणाम प्रभो!
जिससे होवे भव का मंगल
वह अभीष्ट अभिराम प्रभो!'

उठा त्रिशूल, उठे शिवशंकर
डमरू का डिमनाद हुआ,
उठा बढ़ा व्याघ्राम्बर आगे,
तृण तृण में आह्लाद हुआ!

बहा समीरण मंद मंद गति
शीतल शक्ति अथाह लिये,
नवचेतन नवजीवन देने,
संजीवन उत्साह लिये !

हिमगिरि के तुषार हिममंडित
शृंगों का रंग था निखर उठा,
चले शंभु थे महात्राण को
वन वन में रस बिखर उठा !

थी सुरसरि में पुलक भरी,
लहरें ले रही तरंगें थी,
चले दिगंबर विश्वत्राण को,
उर में मधुर उमगें थी !

शृंगी की, विषाण की, डमरू की
ज्यों ही झनकार उठी,
थकित व्यथित देवों दैत्यों में
नवचेतन की धार उठी ?

आँखों के घन अंधकार में
कंचन किरणें घुलती थीं,
किसकी करुणा थी उदारता,
श्वासें मधु में मिलती थी।

देखा देवों ने दैत्यों ने
महादेव शंकर आये,
आज त्रिनेत्र स्फुरित थे कुछ कुछ
थे त्रिशूलध्वज लहराये।

आज शंभु की छवि में अनुपम
था ओजस आनंद भरा,
अभय दान देनेवाला
डमरू में मोहक छंद भरा।

अंग अंग में फूट रही थी
कान्ति तिमिर हरनेवाली,
एक अलौकिक दिव्याभा थी
नवजीवन भरनेवाली,

आज न तांडव की मुद्रा थी,
था न लास का पदविच्छेद,
फिर भी, आज शंभु में रह रह
कुछ रहस्य हरता था खेद!

देखा शिव ने कालकूट
रह रहकर ज्वाल उगलता था,
जो भी आता निकट विकट
लपटों से उसे निगलता था;

किन्तु, जलेंगे क्या शिवशंकर
जो प्रलयंकर त्रिभुवन के ?
जाने कितनी बार उठा
पी गये महाविष जनगण के !

लगा स्वयं विष भी लहराने
भय से कंपित हो मन में,
विश्वनाथ के कर संपुट में
आज बँधा था बंधन में !

जाय कहाँ ? दे शरण कौन ?
है ऐसा कौन महादानी ?
महाकाल कालेश्वर के कर
विष भी बना आज पानी !

लगी लहरने दीर्घ जटायें
इधर उधर लहराती थी,
भाल चंद्रमा था मुसकाता,
किरणें बलि बलि जाती थी !

आज हलाहल शिवअंजलि में
हुई दिशायें सभी अधीर,
जाने क्या हो गरल-पान कर
कहीं न तज दें शंभु शरीर !

उठा लिया शिवशंकर ने विष
इधर स्फुरित कुछ अधर हिले,
उधर कर बढ़ा, बढ़ा हलाहल,
और अधर से ओष्ठ मिले !

आनन में उद्दीप्त तेज था
लोचन युग थे बन्द हुए,
मुखमुद्रा ऐसी प्रसन्न थी
ज्यों कोई मकरन्द पिये !

महादेव ने देवदेव ने
पल में विष का पान किया,
जलते दैत्य, देवता जलते,
जलते भव का त्राण किया !

यदि न आज करुणा कर प्रभु ने
विष का पान किया होता ?
बचता कौन ? अकाल काल ने
सबके प्राण लिया होता !

देव दनुज का स्वर गूंजा
जय जय महादेव जय जय !
दिग दिगन्त गूंजी अनन्त ध्वनि,
मृत्युंजय जय ! देव अभय !!

गीत

यदि तुम करते विष नहीं पान ?

तो कौन उठाता महाभार ?
सब देव दनुज थे गये हार,
यह जग जल बनता महा क्षार !

वे शब्द न छंद ढले अब तक
जो गा सकते हों कीर्तिगान !
पर दुखकातर हे महाप्राण !

अपने जीवन का सुख बिसार,
पर दुख में खिंच आये उदार !
आधार पा गये निराधार,

पा गई जन्म मरती वसुधा,
छा गया गगन में अभय दान !
आये शरीर में लौट प्राण !

तुम से तुम ही हो देव धन्य,
हे विश्ववद्य ! त्राता अनन्य,
तर जाते तुमसे जड़ जघन्य ।

हे करुणामय ! इस करुणा का
यों तना रहे भव में वितान !
भूलो जनगण का तुम न ध्यान !

जब चरण शरण में जन पाओ,
मंगलमय ! यों ही उठ आओ,
नव जन्म मृत्यु क्षण में लाओ,

तुम सा पाकर निज अधिनायक
फिर मथें सिंधु, हो अमृत-पान !
हो सफल साधना का विधान !